श्री गणेश अथर्वशीर्ष एवं संकटनाशनस्तोत्र (अर्थसहित)

भूमिका

श्री गणपति विद्याके देवता, विघ्नहर्ता हैं, उनकी आराधना सर्वत्र की जाती है । अथर्वशीर्ष एवं संकष्टनाशनस्तोत्र, दोनों स्तोत्र अधिक प्रचलित हैं, वे इस लघुग्रन्थमें अर्थसहित दिए गए हैं ।

अधिकांश लोगोंको देवतासे सम्बन्धित जो थोडा-बहुत ज्ञान रहता है, वह बचपनमें पढी अथवा सुनी गई कहानियोंद्वारा होती है । इस अल्प ज्ञानके कारण देवतापर विश्वास भी अल्प ही रहता है । देवताओंसे सम्बन्धित अधिक ज्ञान विश्वासकी वृद्धिमें सहायक होता है, जिससे साधना भी उचित पद्धतिसे होती है । इस दृष्टिकोणसे इस लघुग्रन्थमें श्री गणपतिसे सम्बन्धित, प्रायः अन्यत्र न पाया जानेवाला उपयुक्त अध्यात्मशास्त्रीय ज्ञान दिया है । गणपतिसे म्सम्बन्धित अध्यात्मशास्त्रीय दृष्टिकोणसे विस्तृत ज्ञान सनातनके ग्रन्थ 'श्री गणपति'में दिया गया है । देवतासे सम्बन्धित ज्ञानके साथ ही अध्यात्मशास्त्रीय ज्ञान होनेपर साधना भली प्रकारसे होती है । इसके लिए सनातनके अध्यात्मशास्त्रका ज्ञान देनेवाले ग्रन्थ एवं लघुग्रन्थ उपलब्ध हैं ।

१. श्री गणपति

महर्षि पाणिनीके अनुसार 'गण' का अर्थ है – 'अष्टवसुओंका समूह' । 'वसु' का अर्थ है – दिशा, दिक्पाल अथवा दिक्देव । श्री गणपति दिशाओंके पति, स्वामी हैं । उनकी स्वीकृतिके बिना अन्य देवता किसी भी दिशासे पूजा स्थलपर नहीं आ सकते । इसीलिए कोई मंगलकार्य अथवा किसी देवताकी पूजा करते समय प्रथम गणपतिकी पूजा की जाती है । गणपतिके एक बार दिशाएं मुक्त कर देनेपर हम जिस देवताकी पूजा करेंगे, वे देवता पूजास्थलपर आ सकते हैं । इसीको महाद्वारपूजन अथवा महागणपतिपूजन कहते हैं ।

१ अ. श्री गणपतिकी कुछ प्रमुख विशेषताएं

१. जो भाषा हम बोलते हैं, उस नादभाषाका देवताओंकी प्रकाशभाषामें एवं देवताओंकी प्रकाशभाषाका हमारी नादभाषामें गणपति अनुवाद करते हैं । अन्य देवता अधिकांशतः प्रकाशभाषा ही समझ सकते हैं । हमारी नादभाषा गणपति शीघ्र समझ सकते हैं । इसलिए वे एक ऐसे देवता हैं जो शीघ्र प्रसन्न होते हैं ।

२. मानवदेहके विविध कार्य विविध शक्तियोंद्वारा होते रहते हैं । इन विविध शक्तियोंकी मूलभूत शक्तिको प्राणशक्ति कहते

हैं । गणपतिका नामजप प्राणशक्ति बढाता है, तथा गणपतिके नामजपसे भूतबाधा, करनी आदि अनिष्ट शक्तियोंकी पीडाओं का निवारण भी होता है ।

१ आ. मूर्तिकी कुछ विशेषताओंका भावार्थ

१. सूंड : जिस मूर्तिमें सूंडके अग्रभागका मोड दाहिनी ओर हो, उसे दक्षिणमूर्ति, अर्थात दक्षिणाभिमुखी मूर्ति कहते हैं । यहां दक्षिणका अर्थ है दक्षिण दिशा अथवा दाहिनी ओर । ऐसी मूर्तिकी पूजाके अन्तर्गत कर्मकाण्डके सर्व नियमोंका यथार्थ पालन आवश्यक है । इससे सात्त्विकता बढती है एवं दक्षिणसे प्रसारित रज तरंगोंसे कष्ट नहीं होता ।

जिस मूर्तिमें सूंडके अग्रभागका मोड बाईं ओर हो, उसे वाममुखी कहते हैं । वाम अर्थात बाईं ओर अथवा उत्तर दिशा । बाईं ओर चन्द्रनाडी होती है । यह शीतलता प्रदान करती है । उत्तर दिशा अध्यात्मके लिए पूरक (आनन्ददायक) है । अतः पूजामें अधिकतर वाममुखी मूर्ति रखी जाती है । इनकी पूजा प्रचलित पद्धतिसे की जाती है ।

२. मोदक : मोदकका आकार नारियल समान, अर्थात 'ख' नामक ब्रह्मरन्ध्रके खोल समान होता है । कुण्डलिनीके 'ख'तक

पहुंचनेपर आनन्दकी अनुभूति होती है । हाथमें रखे मोदकका अर्थ है कि उस हाथमें आनन्द प्रदान करनेकी शक्ति है ।

मोदक ज्ञानका प्रतीक है, इसलिए उसे ज्ञानमोदक भी कहते हैं ।

३. अंकुश : आनन्द एवं विद्याकी प्राप्तिमें विघातक शक्तियोंका नाश करनेवाला ।

४. पाश : गणपतिके हाथमें पाश है, अर्थात गणपति अनिष्ट शक्तियोंपर पाश डालकर दूर ले जाते हैं ।

५. कटिसे (कमरसे) लिपटा नाग : विश्वकुण्डलिनी

६. लिपटे हुए नागका फण : जागृत कुण्डलिनी

७. मूषक : मूषक, अर्थात रजोगुण, जो गणपतिके नियन्त्रणमें है ।

१ इ. उपासना

१. दूर्वा : गणेशपूजामें दूर्वाका विशेष महत्त्व है । दूर्वा वह है जो गणेशके दूरस्थ पवित्रकोंको पास लाती है । गणपतिको अर्पित की जानेवाली दूर्वा कोमल होनी चाहिए । इसे बालतृणम् कहते हैं । सूख जानेपर यह सामान्य घास जैसी हो जाती है । दूर्वाकी पत्तियां विषम संख्यामें (जैसे ३, ५, ७) अर्पित करनी चाहिए ।

२. लाल वस्तु : गणपतिका वर्ण लाल है; उनकी पूजामें लाल वस्त्र, लाल फूल एवं रक्तचन्दनका प्रयोग किया जाता है । लाल रंगके कारण वातावरणसे गणपतिके पवित्रक मूर्तिमें अधिक मात्रामें आकर्षित होते हैं एवं मूर्तिके जागृतिकरणमें सहायता मिलती है ।

३. चतुर्थी : जिस दिन गणेश तरंगें प्रथम पृथ्वीपर आईं, अर्थात जिस दिन गणेशजन्म हुआ, वह दिन था माघ शुक्ल पक्ष चतुर्थी । उसी दिनसे गणेशजीका चतुर्थीसे सम्बन्ध स्थापित हुआ ।

२. स्तोत्र

'स्तूयते अनेन इति' अर्थात जिसके योगसे देवताका स्तवन किया जाए, उसे स्तोत्र कहते हैं । स्तोत्रमें देवताकी स्तुति होती है, साथ ही स्तोत्रपाठ करनेवालेके सर्व ओरसे कवच (संरक्षक आवरण) निर्मित करनेकी शक्ति भी होती है । यह स्तोत्रपाठ 'तदर्थभावपूर्वक = तत् + अर्थ + भावपूर्वक', अर्थात उसके (स्तोत्रके) अर्थको समझकर भावसहित (भावपूर्वक) पाठ किया जाए । केवल यन्त्रवत् प्राणहीन उच्चारण करनेसे कोई लाभ नहीं होगा । उच्चारण ऐसा होना चाहिए, जिसके फलस्वरूप जपकर्ता भगवद्भावयुक्त तथा भगवच्छक्तियुक्त हो जाए अर्थात भक्त देवताकी शक्तिसे युक्त हो जाए ।

स्तोत्रोंसे उनकी फलश्रुति संलग्न होती है । आत्मज्ञान सम्पन्न ऋषि-मुनियोंको इस वाङ्मयका स्फुरण परावाणी द्वारा हुआ । फलश्रुतिके साथ उनका संकल्प जुडा है; अतः स्तोत्रपाठ करनेवाले को अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है ।

२ अ. अथर्वशीर्ष : थर्वका अर्थ है उष्ण (गरम), अथर्व का अर्थ है शान्ति, तथा शीर्षका अर्थ है, मस्तक । जिसके पुरश्चरणसे शान्ति प्राप्त होती है, उसे अथर्वशीर्ष कहते हैं । जैमिनीऋषिकी सामवेदीय शाखाके शिष्य मुद्‌गलऋषिने 'साममुद्‌गल गणेशसूक्त'की रचना की। तत्पश्चात उनके शिष्य गणक ऋषिने 'गणपति अथर्वशीर्ष'की रचना की । कई स्तोत्रोंमें देवताका ध्यान, अर्थात मूर्तिका वर्णन पहले किया जाता है, तदुपरान्त स्तुति । इसके विपरीत अथर्वशीर्ष में स्तुति पहले है, जबकि ध्यान तदुपरान्त किया जाता है ।

अथर्वशीर्षके आगे दिए तीन प्रमुख भाग हैं -

१. शान्तिमन्त्र : आरम्भमें 'ॐ भद्रं कर्णेभिः...।' एवं 'स्वस्ति न इन्द्रो...।' ये मन्त्र तथा अन्तमें 'सह नाववतु...।' मन्त्र हैं ।

२. ध्यानविधि : 'ॐ नमस्ते गणपतये' से 'वरदमूर्तये नमः' तक, दस मन्त्र हैं ।

३. फलश्रुति : 'एतदथर्वशीर्षं योऽधीते' आदि चार मन्त्र ।

श्री गणेश देवताका अभिषेक करते हुए, अथर्वशीर्षके इक्कीस आवर्त्तन किए जाते हैं । 'ॐ नमस्ते गणपतये'से 'वरदमूर्तये नमः' तक श्लोकोच्चारण करनेसे, एक आवर्त्तन पूर्ण होता है । प्रत्येक आवर्त्तनके उपरान्त फलश्रुतिके उच्चारणकी आवश्यकता नहीं है । इक्कीसवें अर्थात अन्तिम आवर्त्तनके उपरान्त फलश्रुतिके चार मन्त्रोंका उच्चारण करें ।

स्तोत्रमें उल्लेखित है कि प्रतिदिन दो आवर्त्तनोंका, फलश्रुति सहित उच्चारण करना आवश्यक है, अन्यथा अभीष्ट फलकी प्राप्ति नहीं होती । एकसे अधिक आवर्त्तन करते हुए भी अन्तमें एक ही बार फलश्रुतिका उच्चारण करें । इसी प्रकार प्रत्येक आवर्त्तन से पूर्व तथा अन्तमें शान्तिमन्त्रका उच्चारण आवश्यक नहीं है, अपितु समस्त आवर्त्तनोंके आरम्भ तथा अन्तमें एक ही बार शान्तिमन्त्रका उच्चारण करें ।

अथर्वशीर्ष स्तोत्रके उच्चारणसे शरीरमें सूक्ष्म आध्यात्मिक शक्ति निर्मित होती है, इसलिए आरम्भ तथा अन्तमें शान्तिपाठ उच्चारण आवश्यक है; अन्यथा साधकोंको कष्ट होनेकी आशंका होती है ।

अथर्वशीर्षका धीमी गतिसे, लयबद्ध रीतिसे उच्चारण करें । स्तोत्रपाठसे पूर्व स्नान करें । धुला वस्त्र, मृगछाल, ऊनसे बना कम्बल अथवा दर्भकी चटाईपर बैठें । पाठ पूर्ण होनेतक आसन परिवर्तित न करना पडे, ऐसी स्थितिमें बैठें । दक्षिण दिशाको छोड अन्य किसी भी दिशाकी ओर मुख कर बैठें । पाठ आरम्भ करनेसे पूर्व गणेशकी पूजा करें, अक्षत, दूर्वा, शमी (श्वेत कीकर) वृक्षके फूल एवं लाल रंगके फूल चढाएं । पूजा न कर सकें, तो कुछ मिनट गणेशजीका ध्यान करें, नमस्कार कर पाठ आरम्भ करें । गणेशजीकी मूर्तिकी ओर अथवा ओंकारकी ओर देखते हुए स्तोत्रका पाठ करें, अथवा दृष्टिके समक्ष गणेशमूर्तिकी कल्पना करें । (सनातन संस्थाकी ओरसे गणपतिके सात्त्विक चित्र तथा मूर्तियां बनाई गई हैं ।) इनसे एकाग्रता शीघ्रतासे साध्य होती है । शुचिर्भूत होकर, स्तोत्रपाठ करनेसे आध्यात्मिक शक्ति ग्रहण करनेकी क्षमता बढती है ।

२ आ. संकटनाशनस्तोत्र : यह एक प्रभावी स्तोत्र है । नारदपुराण के इस स्तोत्रकी रचना नारदमुनिने की है । फलश्रुतिमें बताए अनुसार इष्ट फलप्राप्तिके लिए दिनमें तीन बार (प्रातः, दोपहर एवं सायंकाल) स्तोत्रपाठ किया जाए ।

स्तोत्रपाठ सहजतापूर्वक हो, इस हेतु इस लघुग्रन्थमें स्तोत्रपाठ करते हुए हम कहीं-कहीं जहां आवश्यक क्षणभरके लिए रुकते हैं, वहां दो शब्दोंके बीच स्वल्प-विराम दिए हैं । इसी प्रकार 'शब्दके अन्तमें अनुस्वार हैं; अगले शब्दका पहला अक्षर व्यंजन हो, तो अनुस्वारको बिन्दुद्वारा दर्शाएं', संस्कृत लेखनकी यह पद्धति है; यद्यपि अनुस्वारको जहां हो सके ङ्, ञ्, ण्, न्, म् आदि परस वर्णोंसे दर्शाया गया है । ऐसा करनेसे उच्चारण करना सहज होगा । मराठी भाषाके अनुसार 'संहिता' आदि शब्दों में जिस प्रकार अनुस्वारका उच्चारण करते हैं, उसी प्रकार किया जाए । जहां ऐसे उच्चारण परसवर्णोंद्वारा दर्शाना सम्भव नहीं, वहां अनुस्वार ही प्रयुक्त किया गया है । अथर्वशीर्ष स्तोत्र उपनिषदोंका स्तोत्र है, इसलिए इसका उच्चारण शुद्ध तथा उचित पद्धतिसे करना आवश्यक होता है । इसे शब्दोंमें पूर्णतः समझा पाना सम्भव नहीं है कि स्तोत्रोंका उच्चारण कैसे करना चाहिए । इस सन्दर्भमें सरल नियम यही है कि आ, ई, ऊ अक्षरोंका दीर्घ उच्चारण करें ।

ये दोनों स्तोत्र किस प्रकार पढे जाएं, यह साधकोंको ज्ञात होने हेतु सनातनने ऑडियो सीडी भी प्रकाशित की है ।

ध्यान रखनेयोग्य एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है कि अथर्वशीर्षके श्लोक क्र. ६ में 'त्वम् ब्रह्मा..'के अन्तर्गत 'त्वम्' शब्द अगले नामसे सम्बन्धित है । इसलिए मध्य भागमें जब क्षणभर ठहरना चाहें, तो 'त्वम्'के पश्चात न ठहरें अपितु 'त्वम्'के साथ दिया गया नाम उच्चारित कर ही ठहरें; उदा. 'रुद्रस्त्वम्'का उच्चारण करते हुए ठहरना हो, तो त्वम् रुद्रः कहकर ठहरें तथा आगे 'त्वम् इन्द्र...' कहकर श्लोक पूर्ण करें । इसी प्रकार, 'त्वम् अवस्थात्रयातीतः ।' का उल्लेख कुछ प्रतियोंमें नहीं पाया जाता, अतः कोष्ठकमें दिया है ।

श्लोकोंका अर्थ सम्बन्धित स्तोत्रोंके अन्तमें दिया गया है । पाठक, कृपया प्रत्येक शब्द तथा श्लोकके अर्थको समझकर स्तोत्रपाठ करें । इससे स्तोत्रका पाठ अधिक भावपूर्वक हो पाता है । अर्थको भली-भांति समझनेके उपरान्त दिए गए अर्थका पाठ करनेकी आवश्यकता नहीं है । स्तोत्रपाठ धाराप्रवाह तथा लयबद्ध रीतिसे होनेकी दृष्टिसे, इन स्तोत्रोंके अर्थ अन्तमें भी दिए गए हैं ।

इस लघुग्रन्थमें जो स्तोत्र दिए गए हैं, उनका पाठ करनेवालोंको उनसे अधिकाधिक आध्यात्मिक लाभ प्राप्त हो, यह श्री गुरुचरणोंमें प्रार्थना । – **संकलनकर्ता**